पारस परस

वर्ष-12, अंक-3, जुलाई-सितम्बर, 2022, रजि. नं.:यू.पी. एच.आई.एन./2011/39939 पृष्ठ -40 मूल्य- 25

सृजन स्मरण

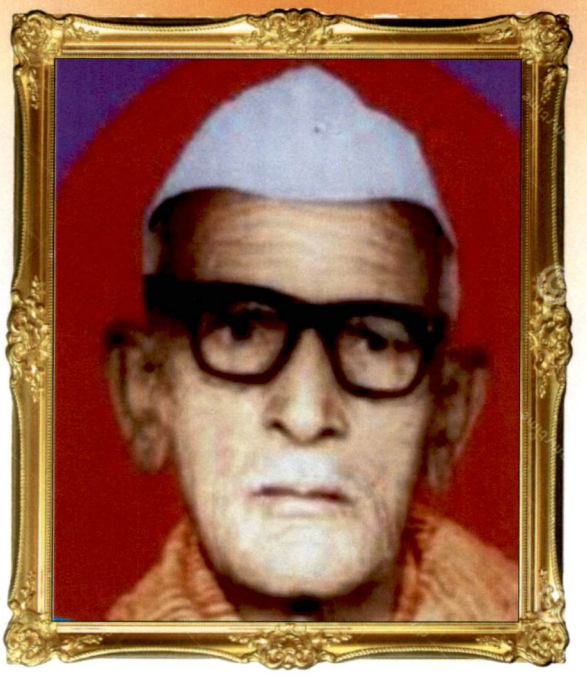

गयाप्रसाद शुक्ल 'सनेही'

जन्म-21 अगस्त 1883, निधन-20 मई 1972

जो भरा नहीं है भावों से,
बहती जिसमें रसधार नहीं।
वह हृदय नहीं है पत्थर है,
जिसमें स्वदेश का प्यार नहीं।

वर्ष : 12 अंक : 3 जुलाई-सितम्बर, 2022 रजि. नं. : यूपी एचआईएन/2011/39939

पारस परस

हिन्दी काव्य की विविध विधाओं
की त्रैमासिक पत्रिका

संरक्षक
डॉ. शम्भुनाथ

प्रधान संपादक
प्रो. सूर्यप्रसाद दीक्षित

संपादक
डॉ. अनिल कुमार

कार्यकारी संपादक
सुशील कुमार अवस्थी

संपादकीय कार्यालय
538 क/1324, शिवलोक
त्रिवेणी नगर तृतीय, लखनऊ
मो. 9935930783
Email: paarasparas.lucknow@gmail.com

लेआउट एवं टाइप सेटिंग
मेट्रो प्रिन्टर्स, लखनऊ

स्वामी प्रकाशक मुद्रक एवं संपादक डॉ. अनिल कुमार द्वारा प्रकाश पैकेजर्स, 257, गोलागंज, लखनऊ उ.प्र. से मुद्रित तथा ए-1/15 रश्मि, खण्ड, शारदा नगर योजना, लखनऊ उ.प्र. से प्रकाशित।
सम्पादकः डॉ. अनिल कुमार

पारस परस में प्रकाशित रचनाओं में व्यक्त विचार संबंधित रचनाकारों के हैं। संपादक अथवा प्रकाशक का रचनाओं में व्यक्त विचारों से सहमत होना आवश्यक नहीं है। पत्रिका से संबंधित सभी विवाद लखनऊ न्यायालय के अधीन होंगे। उपरोक्त सभी पद मानद एवं अवैतनिक हैं।

अनुक्रमणिका

स्वतन्त्रता दिवस : अविस्मरणीय दिवस-	डॉ. अनिल कुमार पाठक	2
पुण्य स्मरण		7
भारत-स्तवन	पं. पारसनाथ पाठक 'प्रसून'	8
भारत-स्तवन	पं. पारसनाथ पाठक 'प्रसून'	9
बाबूजी मेरे रुके नहीं	डॉ, अनिल कुमार पाठक	10
भारत माता का मंदिर यह	मैथिलीशरण गुप्त	11
सिपाही	रामधारी सिंह 'दिनकर'	12
जागो फिर एक बार	सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला'	13
देश-गीत	श्रीधर पाठक	14
भारत माता	सुमित्रानंदन पंत	15
युगावतार गांधी	सोहन लाल द्विवेदी	16
स्वदेश गौरव	रामनरेश त्रिपाठी	17
हिमाद्रि तुंग श्रृंग से	जयशंकर प्रसाद	18
गणतंत्र दिवस	हरिवंशराय बच्चन	19
कदम कदम बढ़ाये जा	वंशीधर शुक्ल	20
वरदान माँगूँगा नहीं...	शिवमंगल सिंह सुमन	21
झंडा अभिवादन	श्यामलाल गुप्त 'पार्षद'22	
शहीदों की चिताओं पर	जगदंबा प्रसाद मिश्र 'हितैषी'	23
मेरे शहीद तुम चिरंजीव!	श्याम नारायण पाण्डेय 24	
सारे जहाँ से अच्छा	मुहम्मद इकबाल	25
उठो स्वदेश के लिये	क्षेमचंद सुमन	26
स्वतंत्रता का दीपक	गोपाल सिंह नेपाली	27
पन्द्रह अगस्त	गिरिजा कुमार माथुर	28
स्वदेश के प्रति	सुभद्रा कुमारी चौहान	29
राष्ट्रगीत	आरसी प्रसाद सिंह	30
नेताजी सुभाषचन्द्र बोस	गोपाल प्रसाद व्यास	31
हमारा प्यारा हिंदुस्तान	गयाप्रसाद शुक्ल 'सनेही'	32
पराधीनता	बाल कवि बैरागी	33
ऐ मेरे वतन के लोगों	रामचन्द्र द्विवेदी 'प्रदीप'	34
नहीं जी रहे अगर देश के लिए	उदयप्रताप सिंह	35
बढ़े चलो	पद्मकांत मालवीय	36
भारत की आरती	शमशेर बहादुर सिंह	37
प्यारा हिंदुस्तान है	गणेशदत्त सारस्वत	38
वह आग न जलने देना	रमानाथ अवस्थी	39
देश की धरती	रामावतार त्यागी	40

स्वतन्त्रता दिवस : अविस्मरणीय दिवस

'15 अगस्त, 1947' भारत की पूर्ण स्वतंत्रता का अविस्मरणीय दिवस! शनैः–शनैः दिवस, मास, वर्ष बीतते गए और अब हम इसकी 75वीं वर्षगाँठ मना रहे हैं। आजादी का यह 75वाँ वर्ष 'अमृत महोत्सव वर्ष' है,इसी लिए यह अवसर इसे हर्षोल्लास से मनाने के साथ इसके संघर्ष के साक्षी उस अतीत के पुनः र्विलोकन का भी है जिससे हम स्वतंत्रता के महासंग्राम में प्राणों की आहुति देने वाले पूर्वजों का पुण्यस्मरण कर सकें। वैसे तो स्वतंत्रता सभी को प्रिय होती है चाहे वह मनुष्य हो या कोई अन्य प्राणी, यहाँ तक कि पेड़–पौधों को भी, किन्तु मानव की स्वतंत्रता की कामना उसके बौद्धिक एवं विवेकशील होने के कारण अन्य प्राणियों, जीव–जन्तुओं, वनस्पतियों से भिन्न है क्योंकि मनुष्यों द्वारा सभ्यता के विकास के साथ–साथ विभिन्न सामाजिक व्यवस्थाओं का निर्माण किया गया और एक–दूसरे के सहयोग, आपसी तालमेल एवं सामंजस्य के माध्यम से विकास–यात्रा प्रारंभ की गई। हालाँकि समय के साथ–साथ विभिन्न स्तरों पर सामाजिक सौमनस्य वैमनस्य के रूप में परिवर्तित हो गया, प्रेम व करुणा का स्थान राग–द्वेष ने ले लिया, सहनेतृत्व की भावना के स्थान पर एकाधिकारवाद की भावना बलवती हो गई। धीरे–धीरे ऐसे ही स्वार्थी प्रवृत्ति के व्यक्ति अधिनायकवादी समूहों के रूप में प्रभावशाली होते गए और विभिन्न राष्ट्रों एवं देशों को अपने अधीन लेने का प्रयास किया।इन तत्वों नैबल एवं शक्ति द्वारा इसमें सफलता भी प्राप्त कर ली और फलस्वरूप उनके आधिपत्य वाले राष्ट्रों व देशों के निवासियों को इनकी व्यवस्थाओं एवं निर्देशों के अनुसार चलने हेतु न केवल मजबूर होना पड़ा बल्कि इनके मूल निवासियों को विभिन्न बर्बरताओं का शिकार भी होना पड़ा।

इतिहास साक्षी है कि मनुष्य में अन्तर्निहित आजादी की मूल भावना को लंबे समय तक न तो दबाया जा सकता है न ही उसे बार–बार कुचला जा सकता है। मनुष्य के अंदर स्वाभाविक रूप से अन्तर्भूत इन भावनाओं का जब एक–दूसरे से आदान–प्रदान होता है तो धीरे–धीरे वह सामूहिक एवं समवेत स्वर बनकर एक दिन मुखर हो जाता है।भारत की आजादी के संदर्भ में भी इसे महसूस किया जा सकता है। 1857 की जन क्रांति,जिसे कुछ लोग एक विद्रोह का नाम देते हैं, कहीं न कहीं इन्हीं भावनाओं की परिणति थी। तत्कालीन असंगठित भारत के विभिन्न पुरोधाओं द्वारा जन–जन में मूलरूप से अन्तर्निहित स्वतंत्रता की भावना को उत्प्रेरित कर जहाँ इसे संपूर्ण भारत में विस्तार प्रदान किया गया वहीं भारत की एकता को सही स्वर एवं दिशा प्रदान करने में इसने महती भूमिका निभाई। इसी जन क्रांति का परिणाम था कि अवचेतन, अव्यक्त रूप में स्वतंत्रता की भावना को चेतना मिली और वह पूर्णतः मुखरित हो गई। कालांतर में,देशवासियों के साथ विदेशों में रह रहे भारती यही नहीं बल्कि भारतीयों से प्रेम, सहानुभूति एवं समानुभूति रखने वाले लोग भी, इससे जुड़ते चले गए और सभी के प्रयासों की अंतिम परिणति पूर्ण स्वतंत्रता के रूप में '15 अगस्त, 1947' को हुई।

आजादी के इस लंबे संघर्ष में असंख्य लोगों नेभिन्न–भिन्न रूपों में अपना योगदान दिया। यद्यपि किसी भी व्यक्ति का योगदान कम या अधिक नहीं कहा जा सकता, लेकिन परंपरागत रूप से किसी भी क्रांति, आंदोलन आदि में कतिपय व्यक्ति मुख्य भूमिका में रहते हैं। ऐसे लोगों को उस समूह का नेतृत्व करने,समूह को समय–समय पर प्रेरित करने तथा इन्हें सही दिशा प्रदान करने के कारण अग्रणी माना जाता है। इसी प्रकार अनेक ऐसी विभूतियाँ भी होती हैं जो यद्यपि सक्रिय रूप से किसी क्रांति, आंदोलन

आदि में प्रतिभाग करती हुई नहीं दिखाई पड़ती हैं तथापि ये विभूतियाँ ऐसे आंदोलनों व क्रांति आदि के लिए विभिन्न माध्यमों से एक धरातल तैयार करती हैं और समय–समय पर बहुविधप्रकार से अपना सहयोग भी देती रहती हैं।

इन विभिन्न माध्यमों में से एक माध्यम साहित्य भी है। विभिन्न रचनाकार अपनी रचनाओं के द्वारा जहाँ किसी क्रांति, जनान्दोलन आदि की पृष्ठभूमि तैयार करने में मदद करते हैं वहीं उसे आगे बढ़ने के लिए प्रेरित भी करते हैं। कहा जाता है कि साहित्य समाज का दर्पण है। इसे इस रूप में भी कहा जा सकता है कि जैसे समाज साहित्य को प्रभावित करता है उसी तरह साहित्य भी समाज को प्रभावित करता है। भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन के संदर्भ में तो निःसंकोच कहा जा सकता है कि विभिन्न भारतीय भाषाओं के साहित्यके साथ ही अन्य भाषाओं के साहित्य ने विविध रूपोंयथा; पत्र–पत्रिकाओं, कहानियों, नाटकों, कविताओं आदि के द्वाराइसे आगे बढ़ाने में बहुत बड़ा योगदान दिया।साहित्य की इन विधाओं के माध्यम से विभिन्न विभूतियों द्वारा भारतीय स्वतंत्रता संग्राम को समय–समय पर धार देने का कार्य किया गया। पत्रकारिता के माध्यम से, पत्र–पत्रिकाओं के सम्पादकीय, विभिन्न लेखों, गीतों आदि के प्रकाशन द्वारा भारतीय जनमानस में पुर्न जागरण तथा राष्ट्र प्रेम की भावना की अलख जगाने में राजा राममोहन राय, अरविंद घोष, विपिन चन्द्र पाल, महामना मदनमोहन मालवीय, बाल गंगाधर तिलक, महात्मा गांधी, गणेश शंकर विद्यार्थी, पं0 जुगल किशोर शुक्ल, यशपाल, चतुरसेन शास्त्री, बालकृष्ण भट्ट,महावीर प्रसाद द्विवेदी, भारतेन्दु हरिश्चन्द्र, बाबूराव विष्णु पराड़कर, माखनलाल चतुर्वेदी,बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' आदि अनेक विभूतियों नेअपना अप्रतिम योगदान दिया। यद्यपि आजादी के संघर्ष में इनमें से अधिकांश का योगदान मात्र पत्रकारिता तक ही सीमित न होकर पूरे स्वतन्त्रता संग्राम में अत्यन्त सक्रिय रहा किन्तु इस माध्यम से भी इन्होंने जनभावनाओं को स्वतंत्रता प्राप्ति हेतु उद्वेलित किया, जागरित किया। इनमें से कई विभूतियाँ जैसे भारतेन्दु हरिश्चन्द्र, महावीर प्रसाद द्विवेदी, माखनलाल चतुर्वेदी, बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' आदि तो मूर्धन्य हिंदी साहित्यकार भी हैं।इनके अतिरिक्तजय शंकर प्रसाद, सुभद्रा कुमारी चौहान, सुमित्रा नन्दन पंत, गया प्रसाद शुक्ल 'सनेही', जगदम्बा प्रसाद मिश्र 'हितैषी', मैथिली शरण गुप्त, सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला', सोहन लाल द्विवेदी, रामधारी सिंह दिनकर आदि जैसे अन्य हिन्दी साहित्यकारों ने न केवल अपनी रचनाओं से लोगों को आजादी की लड़ाई में तन–मन–धन से उतरने के लिए प्रेरित किया बल्कि अधिकांश लोगों ने जेलों में यातनाएँ भी सहीं। भारतेन्दु हरिश्चन्द्र जी, 'भारत जय' कविता में कहते हैं :

"चलहुँ वीर! उठि तुरत सबै जय ध्वजहि उड़ाऔ,
लेहु म्यान सो खड्ग खींचि रण–रंग जमाऔ।
परिकर कसि कटि उठौ धनुष पै धरि सर साधौ,
केसरिया बाना सजि–सजि रन कंकन बाँधौ।"

1857 के भारतीय स्वतंत्रता संग्राम में भारतीयों को मनोवांछित सफलता नहीं मिली और वे अंग्रेजी शासन से भारत को स्वतंत्र नहीं करा सके किन्तु उस स्वतंत्रता संग्राम में विभिन्न भारतीय नायकों के संघर्ष, देश के प्रति त्याग व बलिदान ने सम्पूर्ण जनमानस में स्वतंत्रता की ऐसी ललक जगा दी जिसे अंग्रेज दबा नहीं पाए। उस संग्राम ने सभी को भारतीय नायकों की वीरता, पराक्रम एवं शौर्य का लोहा मानने के लिए मजबूर कर दिया। इस स्वतंत्रता संग्राम का ऐसा ही एक अप्रतिम चरित्र भारत का गौरव

रानी लक्ष्मीबाई का था, जिन्होंने वीरता के समस्त उपमानों को पीछे छोड़ते हुए एक नया उपमान गढ़ दिया। 'झांसी की रानी' की अमर गाथा की चर्चा जहाँ जन श्रुतियों एवं परंपराओं में आज भी गुंजायमान है वहीं उनके इस पराक्रमपूर्ण चरित का गायन भिन्न–भिन्न समय पर अनेक साहित्यकारों ने किया है। इन्हीं में से एक सुभद्रा कुमारी चौहान जी हैं जिन्होंने उनकी शौर्य गाथा का वर्णन करते हुए उनकी समाधि को भी स्वतंत्रता एवं आशा का प्रेरक कहा है :

"बुंदेले हरबोलों के मुँह हमने सुनी कहानी थी।
खूब लड़ी मर्दानी वह तो झाँसीवाली रानी थी।।
रानी से भी अधिक हमें अब, यह समाधि है प्यारी,
यहाँ निहित है स्वतंत्रता की, आशा की चिनगारी।"

किसी भी राष्ट्र की पहचान मात्र भू–भागों से नहीं होती है, बल्कि उन भू–भागों की रक्षा–सुरक्षा एवं उससे प्रेम करने वाले निवासियों से होती है। जब हम यह मान लेते हैं कि वीरप्रसूता यह धरती ही हमारा भरण–पोषण करती हैतो इससे हमारा नाता मातृवत् व पुत्रवत् हो जाता है। यह धरती माता एवं भारत माता हो जाती है और माँ की रक्षा करना संतानों का परम दायित्त्व है।ऐसी ही भावनाओं को समेटे है बंकिमचन्द्र चटर्जी जी द्वारा रचित राष्ट्रगीत 'वंदे मातरम्'। इसी तरह प्रसाद जी भी माँ भारती के वीर पुत्रों का आह्वान करते हैं :

"हिमाद्रि तुंग श्रृंग से,
प्रबुद्ध शुद्ध भारती।
स्वयंप्रभा समुज्ज्वला,
स्वतंत्रता पुकारती।
अमर्त्य वीर पुत्र हो, दृढ़ प्रतिज्ञ सोच लो।
प्रशस्त पुण्य पंथ है, बढ़े चलो, बढ़े चलो।।"

माँ के प्रति प्रेम की भावना, समर्पण एवं त्याग की अपेक्षा उसकी संतानों से करना, भारत की गौरवशाली परम्परा है। जब ऐसी संतान मातृभूमि पर अपना सर्वस्व न्यौछावर करने चल पड़तीहै तो उसके प्रति प्रत्येक देशवासी ही श्रद्धावनत नहीं होता बल्कि 'पुष्प की अभिलाषा' भी यही है जैसा इसका वर्णन माखनलाल चतुर्वेदी जी निम्नवत् करते हैं :

"चाह नहीं, मैं सुरबाला के गहनों में गूँथा जाऊँ।
चाह नहीं, प्रेमी–माला में बिंध प्यारी को ललचाऊँ।।
चाह नहीं, सम्राटों के शव पर, हे हरि! डाला जाऊँ।
चाह नहीं, देवों के सिर पर चढ़ूँ, भाग्य पर इठलाऊँ।।
मुझे तोड़ लेना वनमाली!
उस पथ में देना तुम फेंक।।
मातृभूमि पर शीश चढ़ाने।
जिस पथ जाएँ वीर अनेक।।"

स्वतंत्रता के संघर्ष के दौरान भी विभिन्न रंगों, प्रतीकों आदि के माध्यम से जन–जन में राष्ट्रीयता की भावना को प्रेरित किया गया। ये प्रतीक आजादी के संघर्ष के दौरान ही नहीं आजादी के बाद भी हमारे

लिए उसी तरह प्रेरणास्रोत बने हैं। श्याम लाल गुप्त 'पार्षद' जी द्वारा रचित झंडा गीत ऐसा ही है जो आजादी के दौरान तो जन–जन की जुबान पर रहा ही, आज भी उतना ही लोकप्रिय है और लोगों में राष्ट्रप्रेम की भावना का संचार कर रहा है :

"विजयी विश्व तिरंगा प्यारा,
झंडा ऊँचा रहे हमारा,
सदा शक्ति बरसाने वाला, वीरों को हरषाने वाला।
शांति–सुधा बरसाने वाला, मातृभूति का तन–मन सारा।
झंडा ऊँचा रहे हमारा।"

स्वदेश एवं राष्ट्र के लिए समर्पण व निष्ठा जन्मजात होती है। अभावों एवं विपरीत परिस्थितियों में रहने के बावजूद ऐसा व्यक्ति देश के प्रति अपने अनुराग से विरक्त नहीं होता है। 'स्वदेश गौरव' का भाव राम नरेश त्रिपाठी जी के'स्वप्न' खण्ड काव्य के अन्तर्गत वर्णित निम्नवत् पंक्तियों में देखा जा सकता है :

"विषुवत–रेखा का वासी जो जीता है नित हाँफ–हाँफ कर।
रखता है अनुराग अलौकिक वह भी अपनी मातृभूमि पर।
ध्रुव–वासी जो हिम में तम में जी लेता है काँप–काँप कर।
वह भी अपनी मातृभूमि पर कर देता है प्राण निछावर।
तुम तो हे प्रिय बंधु! स्वर्ग से, सुखद, सकल विभवों के आकर।
धरा–शिरोमणि मातृभूति में धन्य हुए हो जीवन पाकर।
तुम जिसका जल–अन्न ग्रहण कर बड़े हुए लेकर जिसका रज।
तन रहते कैसे तज दोगे? उसको हे वीरों के वंशज!"

स्वदेश पर किसी का आधिपत्य व शासन कभी भी स्वीकार नहीं किया जा सकता। इससे मुक्ति पाने के लिए एकजुट होकर संघर्ष करना ही होगा। इसीलिए तो बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' जी मजदूर और किसानों को उठने का आह्वान करते हैं :

"किसका साहस है कि रख सके तुमको यों चिर बंधन में?
स्वयं मुक्ति ही नाच रही है! सदा तुम्हारे स्पंदन में!
तुममें विप्लव अंतर्हित है, जैसे ज्वाला चंदन में;
टेर रहा है तुम्हें विश्व यह ओ जग के बलवान उठो;
उठो, उठो ओ नंगों भूखो, ओ मजबूर किसान, उठो।"
नवीन जी अपनी एक और रचना में लिखते हैं कि :
"कोटि–कोटि कंठों से निकली, आज यही स्वर धारा है,
भारतवर्ष हमारा है, यह हिंदुस्तान हमारा है।"

वेमजदूर और किसानों का आह्वान तो करते हैं किन्तु यहीं नहीं रुकते। वे अपनी कविता 'विप्लव गायन' में कवि का भी आह्वान करते हैं

"कवि, कुछ ऐसी तान सुनाओ, जिससे उथल–पुथल मच जाए,
एक हिलोर इधर से आए,एक हिलोर उधर से आए।"

गया प्रसाद शुक्ल 'सनेही' जी ने तो यहाँ तक कह दिया :

"जो भरा नहीं है भावों से, बहती जिसमें रसधार नहीं,
वह हृदय नहीं पत्थर है,जिसमें स्वदेश का प्यार नहीं।"

पंत जी ने लंका में श्रीराम द्वारा लक्ष्मण जी से कही गई जननी व जन्मभूमि के प्रति अपनी भावना को निम्नवत् लिखा

"जननी जन्मभूमि प्रिय अपनी
जो स्वर्गादपि गरीयसी।"

जगदम्बा प्रसाद मिश्र 'हितैषी' जी ने वतन पर प्राण न्यौछावर करने वाले सेनानियों के लिए बड़ी मर्मपूर्ण पंक्तियाँ लिखीं

"शहीदों की चिताओं पर जुड़ेंगे हर बरस मेले
वतन पर मरने वालों का यही बाकी निशाँ होगा।"

देश के प्रति सर्वस्व समर्पण का भाव ही हमें आश्वस्त करता है कि हमारी स्वतंत्रता जो भाल का बलिदान देकर मिली थी आज भी हम इसकी रक्षा के लिए अपना सिर कटाने को तैयार हैं। इसी भाव को लेकर राम औतार त्यागी लिखते हैं

"मन समर्पित, तन समर्पित
और यह जीवन समर्पित।
चाहता हूँ देश की धरती तूझे कुछ और भी दूँ।
माँ तुम्हारा ऋण बहुत है, मैं अकिंचन
किन्तु इतना कर रहा, फिर भी निवेदन–
थाल में लाऊँ सजाकर भाल जब भी,
कर दया, स्वीकार लेना यह समर्पण।"

1857 के स्वतंत्रता संग्राम से लेकर भारत की आजादी यानि 15 अगस्त, 1947 तक या कहें कि इसके बाद भी देशवासियों के हृदय में देश प्रेम का भाव जगाने की भावना के साथ ही राष्ट्र के लिए अपने प्राणों की आहुति का संकल्प लिए हुए इस लेख में उल्लिखित महाविभूतियों के अलावा अनगिनत महानुभावों व पूर्वजों ने अपना सारा जीवन राष्ट्र को समर्पित कर दिया। स्वतंत्रता के इस अमृत महोत्सव काल में अब हमारी बारी है कि हम अपने उन पूर्वजों द्वारा दिखाये गये मार्ग पर 'मनसा–वाचा–कर्मणा' चलते हुए भारत की परंपरा एवं संस्कृति को जीवंत व अक्षुण्ण रखने के साथ ही राष्ट्र को उन्नति के शीर्ष पर ले जाएँ। इसके लिए अपने अंदर राष्ट्रप्रेम की भावना के साथ सभी देशवासियों में सौमनस्य, सद्भाव व एकजुटता रखते हुए सकारात्मक सोच के साथ आगे बढ़ना होगा।

इन्हीं संकल्पों के साथ 'पारस परस' का 'आजादी का अमृत महोत्सव'अंक आप सभी को सौंप रहा हूँ। इस अंक में जिन विभूतियों की रचनाएँ उद्धृत की गई हैं या प्रकाशित की गई हैं, उनके एवं उनके परिवारजन तथा प्रकाशकों के प्रति कृतज्ञता व्यक्त करते हैं। साथ ही सभी अमर पूर्वजों, सेनानियों, शहीदों को श्रद्धांजलि अर्पित करते हैं जिनके कारण हम स्वतंत्रत राष्ट्र में पल्लवित व पुष्पित हो रहे हैं।

शुभ कामनाओं के साथ,

डा0 अनिल कुमार

पं. पारस नाथ पाठक 'प्रसून'

जन्म– 17 जुलाई 1932

निधन– 23 जनवरी 2008

तुम अनादि हो, तुम अनन्त हो, दिग्दर्शक, प्रेरक, अरिहन्त।
अजर, अमर, हे प्राणतत्व! तुम, कण-कण में व्यापी बसन्त।।

शिक्षाविद् व हिन्दी कविता के सशक्त हस्ताक्षर **स्व0 पारस नाथ पाठक 'प्रसून'** का जन्म उत्तर प्रदेश के जनपद–जौनपुर के गोपालपुर ग्राम में गुरुपूर्णिमा को हुआ था। प्रारम्भिक शिक्षा स्थानीय विद्यालयों से प्राप्त करने के पश्चात उन्होंने इलाहाबाद विश्वविद्यालय, काशी विद्यापीठ, गोरखपुर विश्वविद्यालय तथा हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग से विभिन्न उपाधियाँ प्राप्त कीं। वे सर्वोदय विद्यापीठ इण्टर कालेज, मीरगंज, जौनपुर में हिन्दी विषय के प्रवक्ता पद पर कार्यरत रहे।

स्व. **'प्रसून'** की पावन स्मृति को अक्षुण्ण रखने के लिए **'पारस परस'** नाम से काव्य–त्रैमासिकी प्रकाशित करने का संकल्प लिया गया जो निर्बाध गति से चल रहा है।

स्वर्गीय 'प्रसून' जी की जन्मतिथि पर विनम्र श्रद्धांजलि

❖❖❖

पं0. पारसनाथ पाठक 'प्रसून'

भारत - स्तवन

माँ तेरे दर्शन से एक बार ।
खिलती हैं कितनी मृदु-आशायें, खुलते हैं शत-शत मुक्ति-द्वार।
सलिल तरंगें धोती चरणों को, मन्द समीरण पंखा झलता।
नीले नभ की छाया में है, मलयानिल ढोता सुरभि-भार । माँ।
दूर क्षितिज के वातायन में कनक-थाल में दीप सजाये।
प्रकृति-वधू तेरे पूजन को गूँथ रही मन-ही एक हार ! माँ।
रवि अपलक आँखों से निरख रहा तेरी छवि बटोर न पाता,
शत-शत किरणों के हाथों से खींच रहा वह मृदुल प्यार। माँ।
शान्ति उदधि की मृदु-शय्या पर शोभित तेरा यह उच्च भाल।
तेरी यह मूर्ति विजय की प्रतिमा तेरा यह द्वार अभय का द्वार। माँ।
काव्य-कला तुमसे मिलती है, अपर-विभूति तुम्हारी है,
सागर किल्लोल तरंगों से करता तेरे यश की पुकार। माँ।
यह रूप तुम्हारा कितना सुन्दर, स्नेह भरा कितना पावन,
माँ तेरे चरणों के नीचे तक क्या पहुँच सकूँगा एक बार।
माँ तेरे दर्शन से एक बार।

❖❖❖

भारत-स्तवन

पं0. पारसनाथ पाठक 'प्रसून'

माँ तेरे दर्शन से एक बार!
खिलती हैं कितनी मृदु–आशायें, खुलते हैं शत–शत मुक्ति–द्वार। माँ...!

सलिल तरंगे धोती चरणों को, मन्द समीरन पंखा झलता।
नीले नभ की छाया में है, मलयानिल ढोता सुरभि–भार। माँ...!

दूर क्षितिज के वातायन में कनक–थाल में दीप सजाये।
प्रकृति–वधू तेरे पूजन को गूँथ रही नव–हीरक हार! माँ...!

रवि अपलक आँखों से निरख रहा तेरी छवि बटोर न पाता,
शत–शत किरणों के हाथों से खींच रहा वह मृदुल प्यार। माँ...!

शान्ति उदधि की मृदु–शय्या पर शोभित तेरा यह उच्च भाल।
तेरी यह मूर्ति विजय की प्रतिमा तेरा यह द्वार अभय का द्वार। माँ...!

काव्य–कला तुझसे मिलती है, अमर–विभूति तुम्हारी है,
सागर निज लोल तरंगों से करता तेरे यश की पुकार। माँ...!

यह रूप तुम्हारा कितना सुन्दर, स्नेह भरा कितना पावन,
माँ तेरे चरणों के नीचे तक, क्या पहुँच सकूँगा एक बार। माँ...!
माँ तेरे दर्शन से एक बार!

❖❖❖

बाबूजी मेरे रुके नहीं

डॉ. अनिल कुमार पाठक

उन्हें पुकारा जिसने भी, रुक गए उसी की खातिर।
ममता, करुणा और नेह भरा था उनमें जो आखिर।
दुःखियों का दुःख अपनाकर भी, कभी दुःखी वे दिखे नहीं।
बाबूजी मेरे रुके नहीं।।

छोड़ गए जो साथ, राह में कपट और लालचवश।
सोचा वे भी रुक जाएँगे डरकर, होंगे परवश।
चले सदा निष्काम भाव से , इन बातों से डिगे नहीं।
बाबूजी मेरे रुके नहीं।।

राजदंड व सत्ता के, फरमानों से कभी न डरकर।
राजमहल की अनुकंपा से, अपने कोठार न भरकर।
असहज, विषम क्षणों में भी, होकर निराश वे झुके नहीं।
बाबूजी मेरे रुके नहीं।।

मानवता के पोषक थे, वे रक्षक पीड़ित जन के।
किया समर्पित जीवन परहित, सेवक सच्चा बन के।
उर से स्मृतियाँ मेरे, ऐसी विभूति की मिटे नहीं।
बाबूजी मेरे रुके नहीं।।

❖❖❖

भारत माता का मंदिर यह

मैथिलीशरण गुप्त

भारत माता का मंदिर यह
समता का संवाद जहाँ,
सबका शिव कल्याण यहाँ है
पावें सभी प्रसाद यहाँ।

जाति–धर्म या संप्रदाय का,
नहीं भेद–व्यवधान यहाँ,
सबका स्वागत, सबका आदर
सबका सम सम्मान यहाँ।
राम, रहीम, बुद्ध, ईसा का,
सुलभ एक सा ध्यान यहाँ,
भिन्न–भिन्न भव संस्कृतियों के
गुण गौरव का ज्ञान यहाँ।

नहीं चाहिए बुद्धि बैर की
भला प्रेम का उन्माद यहाँ
सबका शिव कल्याण यहाँ है,
पावें सभी प्रसाद यहाँ।

सब तीर्थों का एक तीर्थ यह
हृदय पवित्र बना लें हम
आओ यहाँ अजातशत्रु बन,
सबको मित्र बना लें हम।

रेखाएँ प्रस्तुत हैं, अपने
मन के चित्र बना लें हम।
सौ–सौ आदर्शों को लेकर
एक चरित्र बना लें हम।

बैठो माता के आँगन में
नाता भाई–बहन का
समझे उसकी प्रसव वेदना
वही लाल है माई का
एक साथ मिल बाँट लो
अपना हर्ष विषाद यहाँ
सबका शिव कल्याण यहाँ है
पावें सभी प्रसाद यहाँ।

मिला सेव्य का हमें पुजारी
सकल काम उस न्यायी का
मुक्ति लाभ कर्तव्य यहाँ है
एक एक अनुयायी का
कोटि–कोटि कंठों से मिलकर
उठे एक जयनाद यहाँ
सबका शिव कल्याण यहाँ है
पावें सभी प्रसाद यहाँ।

❖❖❖

सिपाही

रामधारी सिंह 'दिनकर'

वनिता की ममता न हुई, सुत का न मुझे कुछ छोह हुआ,
ख्याति, सुयश, सम्मान, विभव का, त्योंही, कभी न मोह हुआ।
जीवन की क्या चहल–पहल है, इसे न मैंने पहचाना,
सेनापति के एक इशारे पर मिटना केवल जाना।

मसि की तो क्या बात? गली की ठिकरी मुझे भुलाती है,
जीते जी लड़ मरूँ, मरे पर याद किसे फिर आती है?
इतिहासों में अमर रहूँ, है ऐसी मृत्यु नहीं मेरी,
विश्व छोड़ जब चला, भूलते लगती फिर किसको देरी?

जग भूले, पर मुझे एक, बस, सेवा–धर्म निभाना है,
जिसकी है यह देह उसी में इसे मिला मिट जाना है।
विजय–विटप को विकच देख जिस दिन तुम हृदय जुड़ाओगे,
फूलों में शोणित की लाली कभी समझ क्या पाओगे?

वह लाली हर प्रात क्षितिज पर आकर तुम्हें जगायेगी,
सायंकाल नमन कर माँ को तिमिर–बीच खो जायेगी।
देव करेंगे विनय, किन्तु, क्या स्वर्ग–बीच रुक पाऊँगा?
किसी रात चुपके उल्का बन कूद भूमि पर आऊँगा।

तुम न जान पाओगे, पर, मैं रोज खिलूँगा इधर–उधर,
कभी फूल की पंखुड़ियाँ बन, कभी एक पत्ती बनकर
अपनी राह चली जायेगी वीरों की सेना रण में,
रह जाऊँगा मौन वृन्त पर सोच, न जाने, क्या मन में?

तप्त वेग धमनी का बनकर कभी संग मैं हो लूँगा,
कभी चरण– तल की मिट्टी में छिपकर जय–जय बोलूँगा।
अगले युग की अनी कपिध्वज जिस दिन प्रलय मचायेगी,
मैं गरजूंगा ध्वजा–श्रृंग पर, वह पहचान न पायेगी।

न्योछावर में एक फूल, पर, जग की ऐसी रीत कहाँ?
एक पंक्ति मेरी सुधि में भी, सस्ते इतने गीत कहाँ?
कविते! देखो विजन विपिन में वन्य–कुसुम का मुरझाना
व्यर्थ न होगा इस समाधि पर दो आँसू–कण बरसाना।

❖❖❖

जागो फिर एक बार

सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला'

जागो फिर एक बार!
प्यारे जगाते हुए हारे सब तारे तुम्हें,
अरुण–पंख तरुण–किरण
खड़ी खोलती है द्वार–
जागो फिर एक बार!

आँखे अलियों–सी
किस मधु की गलियों में फँसी,
बन्द कर पाखें
पी रही हैं मधु मौन
अथवा सोई कमल–कोरकों में?–
बन्द हो रहा गुंजार–
जागो फिर एक बार!

अस्ताचल ढले रवि,
शशि–छवि विभावरी में
चित्रित हुई है देख
यामिनी गन्धा जगी,
एकटक चकोर–कोर दर्शन–प्रिय,
आशाओं भरी मौन भाषा बहुभावमयी

घेर रही चन्द्र को चाव से,
शिशिर–भार–व्याकुल कुल
खुले फूल झुके हुए,
आया कलियों में मधुर–
मद–उर–यौवन उभार
जागो फिर एक बार!

पिउ रव पपीहे प्रिय बोल रहे,
सेज पर विरह–विदग्धा वधू
याद कर बीती बातें,
रातें मन–मिलन की,
मूँद रही पलकें चारु,
नयन जल ढल गये
लघुतर कर व्यथा–भार–
जागो फिर एक बार!
सहृदय समीर जैसे,
पोछों प्रिय, नयन–नीर
शयन–शिथिल बाहें
भर स्वप्निल आवेश में,
आतुर उर वसन–मुक्त कर दो
सब सुप्ति सुखोन्माद हो!
छूट–छूट अलस
फैल जाने दो पीठ पर
कल्पना से कोमल
ऋजु–कुटिल प्रसार–कामी
केश–गुच्छ।

तन–मन थक जायें,
मृदु सरभि–सी समीर में
बुद्धि बुद्धि में हो लीन,
मन में मन, जी जी में,
एक अनुभव बहता रहे,
उभय आत्माओं मे
कब से मैं रही पुकार
जागो फिर एक बार!

उगे अरुणाचल में रवि,
आई भारती–रति कवि–कण्ठ में
क्षण–क्षण में परिवर्तित
होते रहे प्रकति–पट
गया दिन, आई रात
गई रात, खुला दिन
ऐसे ही संसार के बीते दिन, पक्ष,
मास,
वर्ष कितने ही हजार,
जागो फिर एक बार।

❖❖❖

देश-गीत

श्रीधर पाठक

जय जय प्यारा, जग से न्यारा
शोभित सारा, देश हमारा,
जगत–मुकुट, जगदीश दुलारा
जग–सौभाग्य, सुदेश।
जय जय प्यारा भारत देश।

प्यारा देश, जय देशेश,
अजय अशेष, सदय विशेष,
जहाँ न संभव अघ का लेश,
संभव केवल पुण्य–प्रवेश।
जय जय प्यारा भारत–देश।

स्वर्गिक शीश–फूल पृथिवी का,
प्रेम–मूल, प्रिय लोकत्रयी का,
सुललित प्रकृति–नटी का टीका,
ज्यों निशि का राकेश।
जय जय प्यारा भारत–देश।

जय जय शुभ्र हिमाचल–श्रृंगा,
कल–रव–निरत कलोलिनि गंगा,
भानु–प्रताप–समत्कृत अंगा,
तेज–पुंज तप–वेश।
जय जय प्यारा भारत–देश।

जग में कोटि–कोटि जुग जीवै,
जीवन–सुलभ अमी–रस पीवै,
सुखद वितान सुकृत का सीवै,
रहै स्वतंत्र हमेश।
जय जय प्यारा भारत–देश।

❖❖❖

भारत माता

सुमित्रानंदन पंत

भारत माता
ग्रामवासिनी!
खेतों में फैला दृग श्यामल
शस्य भरा जन जीवन आँचल
गंगा,यमुना में शुचि श्रम जल
शील मूर्ति,
सुख–दुख उदासिनी!

स्वप्न मौन, प्रभु पद नत चितवन,
होंठों पर हँसते दुख के क्षण,
संयम तप का धरती सा मन,
स्वर्ग कला,
भू पथ प्रवासिनी!

तीस कोटि सुत, अर्ध नग्न तन,
अन्न वस्त्र पीड़ित, अनपढ़, जन,
झाड़ फूस खर के घर आँगन,
प्रणत शीष
तरुतल निवासिनी!

विश्व प्रगति से निपट अपरिचित,
अर्ध सभ्य, जीवन रुचि संस्कृत,
रूढ़ि रीतियों से गति कुंठित,
राहु ग्रसित
शरदेन्दु हासिनी!

सदियों का खँडहर, निष्क्रिय मन,
लक्ष्य हीन, जर्जर जन जीवन,
कैसे हो भू रचना नूतन–
ज्ञान मूढ़
गीता प्रकाशिनी!

पंचशील रत, विश्व शांति व्रत,–
युग–युग से गृह आँगन श्रीहत,
कब होंगे जन उद्यत जाग्रत?
सोच मग्न
जीवन विकासिनी!

उसे चाहिए लौह संगठन,
सुन्दर तन, श्रद्धा दीपित मन,
भू जीवन प्रति अथक समर्पण,
लोक कलामयि,
रस विलासिनी!

❖❖❖

युगावतार गांधी

सोहन लाल द्विवेदी

चल पड़े जिधर दो डग मग में
चल पड़े कोटि पग उसी ओर,
पड़ गई जिधर भी एक दृष्टि
गड़ गये कोटि दृग उसी ओर,
जिसके शिर पर निज धरा हाथ
उसके शिर–रक्षक कोटि हाथ,
जिस पर निज मस्तक झुका दिया
झुक गये उसी पर कोटि माथ
हे कोटिचरण, हे कोटिबाहु!
हे कोटिरूप, हे कोटिनाम!
तुम एकमूर्ति, प्रतिमूर्ति कोटि
हे कोटिमूर्ति, तुमको प्रणाम!

युग बढ़ा तुम्हारी हँसी देख
युग हटा तुम्हारी भृकुटि देख,
तुम अचल मेखला बन भू की
खींचते काल पर अमिट रेख
तुम बोल उठे, युग बोल उठा,
तुम मौन बने, युग मौन बना,
कुछ कर्म तुम्हारे संचित कर
युगकर्म जगा, युगधर्म तनाय
युग–परिवर्तक, युग–संस्थापक,
युग–संचालक, हे युगाधार!
युग–निर्माता, युग–मूर्ति! तुम्हें
युग–युग तक युग का नमस्कार!

तुम युग–युग की रूढ़ियाँ तोड़
रचते रहते नित नई सृष्टि,
उठती नवजीवन की नींवें
ले नवचेतन की दिव्य–दृष्टि
धर्माडंबर के खँडहर पर
कर पद–प्रहार, कर धराध्वस्त
मानवता का पावन मंदिर
निर्माण कर रहे सृजनव्यस्त!
बढ़ते ही जाते दिग्विजयी!
गढ़ते तुम अपना रामराज,
आत्माहुति के मणिमाणिक से
मढ़ते जननी का स्वर्णताज!

तुम कालचक्र के रक्त सने
दशनों को कर से पकड़ सुदृढ़,
मानव को दानव के मुँह से
ला रहे खींच बाहर बढ़ बढ़
पिसती कराहती जगती के
प्राणों में भरते अभय दान,
अधमरे देखते हैं तुमको,
किसने आकर यह किया त्राण?
दृढ़ चरण, सुदृढ़ करसंपुट से
तुम कालचक्र की चाल रोक,
नित महाकाल की छाती पर
लिखते करुणा के पुण्य श्लोक!

कँपता असत्य, कँपती मिथ्या,
बर्बरता कँपती है थरथर!
कँपते सिंहासन, राजमुकुट
कँपते, खिसके आते भू पर,
हैं अस्त्र–शस्त्र कुंठित लुंठित,
सेनायें करती गृह–प्रयाण!
रणभेरी तेरी बजती है,
उड़ता है तेरा ध्वज निशान!
हे युग–दृष्टा, हे युग–स्रष्टा,
पढ़ते कैसा यह मोक्ष–मंत्र?
इस राजतंत्र के खँडहर में
उगता अभिनव भारत स्वतंत्र!

❖❖❖

स्वदेश गौरव

रामनरेश त्रिपाठी

अतुलनीय जिनके प्रताप का
साक्षी है प्रत्यक्ष दिवाकर
घूम–घूमकर देख चुका है
जिनकी निर्मल कीर्ति निशाकर
देख चुके है जिनका वैभव
ये नभ के अनंत तारागण
अगणित बार सुन चुका है नभ
जिनकी विजय–घोष रण–गर्जन।

शोभित है सर्वोच्च मुकुट से
जिनके दिव्य देश का मस्तक
गूँज रही हैं सकल दिशाएँ
जिनके जयगीतों से अब तक
जिनकी महिमा का है अविरल
साक्षी सत्य–रूप हिम गिरिवर
उतरा करते थे विमानदल
जिनके विस्तृत वक्षस्थल पर।

सागर निज छाती पर जिनके
अगणित अर्णव–पोत उठाकर
पहुँचाया करता था प्रमुदित
भूमंडल के सकल तटों पर
नदियाँ जिनकी यश–धारा–सी
बहती हैं अब भी निशि–वासर
ढूँढ़ों उनके चरण–चिन्ह भी
पाओगे तुम इनके तट पर।

हे युवकों! तुम उन्हीं पूर्वजों
के वंशज, उनके हो प्रतिनिधि
तुम्हीं मान–रक्षक हो उनके
कीर्ति–तरंगिणियों के वारिधि
रवि, शशि, उडुगण, गगन दिशाएँ,
है गिरि नदी, मेदिनी तब तक
निज पैतृक धन स्वतंत्रता को
क्या तुम तज सकते हो तब तक?

विषुवत रेखा का वासी जो
जीता है नित हाँफ–हाँफ कर
रखता है अनुराग अलौकिक
वह भी अपनी मातृभूमि पर
ध्रुव–वासी जो हिम में तम में
जी लेता है काँप–काँप कर
वह भी अपनी मातृभूमि पर
कर देता है प्राण निछावर।

तुम तो हे प्रिय बंधु! स्वर्ग से
सुखद, सकल विभवों के आकर
धरा–शिरोमणि मातृभूमि में
धन्य हुए हो जीवन पाकर
तुम जिसका जल–अन्न ग्रहण कर
बड़े हुए लेकर जिसका रज
तन रहते कैसे तज दोगे?
उसको हे वीरों के वंशज!

पर–पद–दलित, पर–मुखापेक्षी,
पराधीन, परतंत्र, पराजित
होकर कहीं आर्य जीते है?
पामर, पशु–सम पतित, पराजित
तुम्हीं देश के आशा–स्थल हो
तुम्हीं शक्ति संपदा तुम्हीं सुख
जर्जर होकर भी जीवित है
देश तुम्हारा देख–देख मुख।

❖❖❖

हिमाद्रि तुंग श्रृंग से

जयशंकर प्रसाद

हिमाद्रि तुंग श्रृंग से
प्रबुद्ध शुद्ध भारती–
स्वयंप्रभा समुज्ज्वला
स्वतंत्रता पुकारती–
अमर्त्य वीरपुत्र हो, दृढ़– प्रतिज्ञ सोच लो।
प्रशस्त पुण्य पंथ है,–बढ़े चलो, बढ़े चलो।।

असंख्य कीर्ति–रश्मियाँ,
विकीर्ण दिव्य दाह–सी।
सपूत मातृभूमि के–
रुको न शूर साहसी
अराति सैन्य सिंधु में, सुबाड़वाग्नि–से जलो।
प्रवीर हो जयी बनो–बढ़े चलो, बढ़े चलो।।

❖❖❖

गणतंत्र दिवस

हरिवंशराय बच्चन

एक और जंजीर तड़कती है, भारत मां की जय बोलो।
इन जंजीरों की चर्चा में कितनों ने निज हाथ बँधाए,
कितनों ने इनको छूने के कारण कारागार बसाए,
इन्हें पकड़ने में कितनों ने लाठी खाई, कोड़े ओड़े,
और इन्हें झटके देने में कितनों ने निज प्राण गँवाए!
किंतु शहीदों की आहों से शापित लोहा, कच्चा धागा।
एक और जंजीर तड़कती है, भारत मां की जय बोलो।

जय बोलो उस धीर व्रती की जिसने सोता देश जगाया,
जिसने मिट्टी के पुतलों को वीरों का बाना पहनाया,
जिसने आजादी लेने की एक निराली राह निकाली,
और स्वयं उसपर चलने में जिसने अपना शीश चढ़ाया,
घृणा मिटाने को दुनियाँ से लिखा लहू से जिसने अपने,
"जो कि तुम्हारे हित विष घोले, तुम उसके हित अमृत घोलो।"
एक और जंजीर तड़कती है, भारत मां की जय बोलो।

कठिन नहीं होता है बाहर की बाधा को दूर भगाना,
कठिन नहीं होता है बाहर के बंधन को काट हटाना,
गैरों से कहना क्या मुश्किल अपने घर की राह सिधारें,
किंतु नहीं पहचाना जाता अपनों में बैठा बेगाना,
बाहर जब बेड़ी पड़ती है भीतर भी गाँठें लग जातीं,
बाहर के सब बंधन टूटे, भीतर के अब बंधन खोलो।
एक और जंजीर तड़कती है, भारत मां की जय बोलो।

कटीं बेड़ियाँ औ' हथकड़ियाँ, हर्ष मनाओ, मंगल गाओ,
किंतु यहाँ पर लक्ष्य नहीं है, आगे पथ पर पाँव बढ़ाओ,
आजादी वह मूर्ति नहीं है जो बैठी रहती मंदिर में,
उसकी पूजा करनी है तो नक्षत्रों से होड़ लगाओ।
हल्का फूल नहीं आजादी, वह है भारी जिम्मेदारी,
उसे उठाने को कंधों के, भुजदंडों के, बल को तोलो।
एक और जंजीर तड़कती है, भारत मां की जय बोलो।

❖❖❖

कदम कदम बढाये जा

वंशीधर शुक्ल

कदम क़दम बढाए जा
ख़ुशी के गीत गाए जा
ये जिन्दगी है क़ौम की
तू क़ौम पर लुटाए जा ।
उड़ी तमिस्र रात है, जगा नया प्रभात है,
चली नई जमात है, मानो कोई बरात है,
समय है मुस्कराए जा
ख़ुशी के गीत गाए जा
ये जिन्दगी है क़ौम की
तू क़ौम पर लुटाए जा ।
जो आ पडे कोई विपत्ति मार के भगाएँगे,
जो आए मौत सामने तो दाँत तोड़ लाएँगे,
बहार की बहार में,
बहार ही लुटाए जा ।
क़दम क़दम बढाए जा
ख़ुशी के गीत गाए जा
ये जिन्दगी है क़ौम की
तू क़ौम पर लुटाए जा ।
जहाँ तलक न लक्ष्य पूर्ण हो समर करेगे हम,
खड़ा हो शत्रु सामने तो शीश पै चढ़ेंगे हम,
विजय हमारे हाथ है
क़दम क़दम बढाए जा
ख़ुशी के गीत गाए जा
क़दम बढ़े तो बढ़ चले आकाश तक चढ़ेगे हम
लड़े है लड़ रहे है तो जहान से लड़ेगे हम,
बड़ी लड़ाइयाँ हैं तो
बड़ा क़दम बढ़ाए जा
ख़ुशी के गीत गाए जा
निगाह चौमुखी रहे विचार लक्ष्य पर रहे
जिधर से शत्रु आ रहा उसी तरफ नजर रहे
स्वतंत्रता का युद्ध है
स्वतंत्र होके गाए जा
क़दम क़दम बढाए जा
ख़ुशी के गीत गाए जा
ये जिन्दगी है क़ौम की
तू क़ौम पर लुटाए जा ।

❖❖❖

वरदान माँगूँगा नहीं...

शिवमंगल सिंह 'सुमन'

यह हार एक विराम है
जीवन महासंग्राम है
तिल–तिल मिटूँगा पर दया की भीख मैं लूँगा नहीं।
वरदान माँगूँगा नहीं।।

स्मृति सुखद प्रहरों के लिए
अपने खंडहरों के लिए
यह जान लो मैं विश्व की संपत्ति चाहूँगा नहीं।
वरदान माँगूँगा नहीं।।

क्या हार में क्या जीत में
किंचित नहीं भयभीत मैं
संधर्ष पथ पर जो मिले यह भी सही वह भी सही।
वरदान माँगूँगा नहीं।।

लघुता न अब मेरी छुओ
तुम हो महान बने रहो
अपने हृदय की वेदना मैं व्यर्थ त्यागूँगा नहीं।
वरदान माँगूँगा नहीं।।

चाहे हृदय को ताप दो
चाहे मुझे अभिशाप दो
कुछ भी करो कर्तव्य पथ से किंतु भागूँगा नहीं।
वरदान माँगूँगा नहीं।।

❖❖❖

झंडा अभिवादन

श्यामलाल गुप्त पार्षद

विजयी विश्व तिरंगा प्यारा,
झण्डा ऊँचा रहे हमारा।

सदा शक्ति बरसाने वाला,
प्रेम–सुधा सरसाने वाला,
वीरों को हर्षाने वाला,
मातृ भूमि का तन–मन सारा,
झंडा ऊँचा रहे हमारा।

स्वतंत्रता के भीषण रण में,
लखकर जोश बढ़े क्षण क्षण में,
काँपे शत्रु देखकर मन में,
मिट जाए भय संकट सारा,
झंडा ऊँचा रहे हमारा।

इस झंडे के नीचे निर्भय,
हो स्वराज्य जनता का निश्चय,
बोलो भारत माता की जय,
स्वतंत्रता ही ध्वेय हमारा,
झंडा ऊंचा रहे हमारा।

आओ प्यारे वीरों आओ,
देश धर्म पर बलि–बलि जाओ,
एक साथ सब मिल कर गाओ,
प्यारा भारत देश हमारा,
झंडा ऊंचा रहे हमारा।

शान न इसकी जाने पाए,
चाहे जान भले ही जाए,
विश्व विजय करके दिखलाए,
तब होवे प्रण पूर्ण हमारा,
झंडा ऊंचा रहे हमारा।

❖❖❖

शहीदों की चिताओं पर

जगदंबा प्रसाद मिश्र 'हितैषी'

उरूजे कामयाबी पर कभी हिंदोस्तां होगा,
रिहा सैय्याद के हाथों से अपना आशियां होगा।

चखाएंगे मजा बर्बादी–ए–गुलशन का गुलचीं को,
बहार आ जाएगी उस दम जब अपना बागबां होगा।

ये आए दिन की छेड़ अच्छी नहीं, ऐ ख़ंजरे–कातिल,
पता कब फैसला उनके–हमारे दरमियां होगां

जुदा मत हो मेरे पहलू से ऐ दर्दे–वतन हर्गिज,
न जाने बाद मुर्दन मैं कहाँ औ तू कहाँ होगा।

वतन की आबरू का पास देखें कौन करता है,
सुना है आज मक़तल में हमारा इम्तहां होगा।

शहीदों की चिताओं पर जुड़ेंगे हर बरस मेले,
वतन पर मरने वालों का यही बाक़ी निशाँ होगा।

कभी वह दिन भी आएगा, जब अपना राज देखेंगे,
जब अपनी ही जमीं होगी और अपना आसमां होगा।

❖❖❖

मेरे शहीद तुम चिरंजीव!

श्याम नारायण पाण्डेय

केसरिया तन पर वक्ष तान
कूदे पावक में नव जवान
होली जल उठी जली सतियाँ
अब भी कण–कण में विद्यमान
मेरे शहीद तुम चिरंजीव!

वह करामात थी वीरों में
मेवाड़ देश रणधीरों में
अड़ गये हिमालय के समान
बँध सकी न माँ जंजीरों में
मेरे शहीद तुम चिरंजीव!

बढ़ चले निडर हथियारों में
चढ़ चले निठुर तलवारों में
पीछे न एक डग फिरे कभी
चुन गये वीर दीवारों में
हे राय हकीकत चिरंजीव!

सह भूख–प्यास की ज्वालाएँ
पहनी कड़ियों की मालाएँ
कारा के रौरव से निकाल
ले गयीं तुझे सुर–बालाएँ
युग–युग यतीन्द्र तुम चिरंजीव!

अपने तन को बरबाद किया
उजड़े घर को आबाद किया
माता की जय का नाद किया
पर हम सबको आजाद किया
आजाद, भगतसिंह चिरंजीव!

रख दिया शीश तलवारों पर
थे, कूद पड़े अंगारों पर
थी एक लगन था एक ध्येय
सो गये रक्त फौहारों पर
मेरे गणेश तुम चिरंजीव!

जलियान–रक्त से निकल पड़े
प्रज्ज्वलित धधकते अंगारे
लो आग क्रान्ति की भड़क उठी
डूबे रवि शशि डूबे तारे
मेरे ऊधम सिंह चिरंजीव!

तुम पग–पग वीर चलो दिल्ली
जिसका जयहिन्द प्रयाण–गीत
हिन्दू–मुस्लिम की हारजीत
मेरे सुभाष तुम चिरंजीव!
मेरे शहीद तुम चिरंजीव!

❖❖❖

सारे जहाँ से अच्छा

मुहम्मद इकबाल

सारे जहाँ से अच्छा, हिन्दोस्ताँ हमारा,
हम बुलबुलें हैं इसकी, यह गुलिस्ताँ हमारा।।

गुरबत में हों अगर हम, रहता है दिल वतन में,
समझो वहीं हमें भी, दिल हो जहाँ हमारा।।

परबत वो सबसे ऊँचा, हमसाया आसमाँ का,
वो संतरी हमारा, वो पासबाँ हमारा।।

गोदी में खेलती हैं, जिसकी हजारों नदियाँ,
गुलशन है जिसके दम से, रश्क–ए–जिनाँ हमारा।।

ऐ आब–ए–रूद–ए–गंगा, वो दिन है याद तुझको,
उतरा तेरे किनारे, जब कारवाँ हमारा।।

मजहब नहीं सिखाता, आपस में बैर रखना,
हिन्दी हैं हम, वतन है हिन्दोस्ताँ हमारा।।

सारे जहाँ से अच्छा, हिन्दोस्ताँ हमारा,
हम बुलबुलें हैं इसकी, यह गुलिस्ताँ हमारा।।

❖❖❖

उठो स्वदेश के लिये

क्षेमचंद सुमन

उठो स्वदेश के लिये बने कराल काल तुम
उठो स्वदेश के लिये बने विशाल ढाल तुम

उठो हिमाद्रि श्रृंग से तुम्हे प्रजा पुकारती
उठो प्रशांत पंथ पर बढ़ो सुबुद्ध भारती।

जागो विराट देश के तरुण तुम्हें निहारते
जागो अचल, मचल, विफल, अरुण तुम्हें निहारते।

बढ़ो नयी जवानियाँ सजीं कि शीश झुक गए
बढ़ो मिली कहानियाँ कि प्रेम गीत रुक गए।

चलो कि आज स्वत्व का समर तुम्हें पुकारता
चलो कि देश का सुमन सुमन तुम्हें निहारता।

उठो स्वदेश के लिये, बने कराल काल तुम
उठो स्वदेश के लिये, बने विशाल ढाल तुम।

❖❖❖

स्वतंत्रता का दीपक

गोपाल सिंह नेपाली

घोर अंधकार हो, चल रही बयार हो,
आज द्वार द्वार पर यह दिया बुझे नहीं।
यह निशीथ का दिया ला रहा विहान है ।

शक्ति का दिया हुआ, शक्ति को दिया हुआ,
भक्ति से दिया हुआ, यह स्वतंत्रता दिया,
रुक रही न नाव हो, जोर का बहाव हो,
आज गंगधार पर यह दिया बुझे नहीं!
यह स्वदेश का दिया हुआ प्राण के समान है!

यह अतीत कल्पना, यह विनीत प्रार्थना,
यह पुनीत भावना, यह अनंत साधना,
शांति हो, अशांति हो, युद्ध, संधि, क्रांति हो,
तीर पर, कछार पर, यह दिया बुझे नहीं!
देश पर, समाज पर, ज्योति का वितान है!

तीन चार फूल है, आस पास धूल है,
बाँस है, फूल है, घास के दुकूल है,
वायु भी हिलोर से, फूँक दे, झकोर दे,
कब्र पर, मजार पर, यह दिया बुझे नहीं!
यह किसी शहीद का पुण्य प्राणदान है!

झूम झूम बदलियाँ, चूम चूम बिजलियाँ
आँधियाँ उठा रही, हलचले मचा रही!
लड़ रहा स्वदेश हो, शांति का न लेश हो
क्षुद्र जीत हार पर, यह दिया बुझे नहीं!
यह स्वतंत्र भावना का स्वतंत्र गान है!

❖❖❖

पन्द्रह अगस्त

गिरिजा कुमार माथुर

आज जीत की रात
पहरुए सावधान रहना !
खुले देश के द्वार
अचल दीपक समान रहना !

प्रथम चरण है नए स्वर्ग का
है मंजिल का छोर
इस जन–मन्थन से उठ आई
पहली रत्न हिलोर
अभी शेष है पूरी होना
जीवन मुक्ता डोर
क्योंकि नहीं मिट पाई दुख की
विगत साँवली कोर

ले युग की पतवार
बने अम्बुधि महान रहना
पहरुए, सावधान रहना !

विषम श्रृँखलाएँ टूटी हैं
खुली समस्त दिशाएँ
आज प्रभंजन बन कर चलतीं
युग बन्दिनी हवाएँ
प्रश्नचिह्न बन खड़ी हो गईं
यह सिमटी सीमाएँ
आज पुराने सिंहासन की
टूट रही प्रतिमाएँ

उठता है तूफान इन्दु तुम
दीप्तिमान रहना
पहरुए, सावधान रहना !

ऊँची हुई मशाल हमारी
आगे कठिन डगर है
शत्रु हट गया, लेकिन
उसकी छायाओं का डर है
शोषण से मृत है समाज
कमजोर हमारा घर है
किन्तु आ रही नई जिन्दगी
यह विश्वास अमर है

जन–गंगा में ज्वार
लहर तुम प्रवहमान रहना
पहरुए, सावधान रहना !

❖❖❖

स्वदेश के प्रति

सुभद्रा कुमारी चौहान

स्वागत करती हूँ तेरा।
तुझे देखकर आज हो रहा,
दूना प्रमुदित मन मेरा।।

आ, उस बालक के समान
जो है गुरुता का अधिकारी।
आ, उस युवक–वीर सा जिसको
विपदाएं ही हैं प्यारी।।

आ, उस सेवक के समान तू
विनय–शील अनुगामी सा।
अथवा आ तू युद्ध–क्षेत्र में
कीर्ति–ध्वजा का स्वामी सा।।

आशा की सूखी लतिकाएं
तुझको पा, फिर लहराईं।
अत्याचारी की कृतियों को
निर्भयता से दरसाईं।।

❖❖❖

राष्ट्रगीत

आरसी प्रसाद सिंह

सारे जग को पथ दिखलाने–
वाला जो ध्रुव तारा है।
भारत–भू ने जन्म दिया है,
यह सौभाग्य हमारा है।।
धूप खुली है, खुली हवा है।
सौ रोगों की एक दवा है।
चंदन की खुशबू से भीगा–
भीगा आँचल सारा है।।
जन्म–भूमि से बढ़कर सुंदर,
कौन देश है इस धरती पर।
इसमें जीना भी प्यारा है,
इसमें मरना भी प्यारा है।।
चाहे आँधी शोर मचाए,
चाहे बिजली आँख दिखाए।
हम न झुकेंगे, हम न रुकेंगे,
यही हमारा नारा है।।
पर्वत–पर्वत पाँव बढ़ाता।
सागर की लहरों पर गाता।
आसमान में राह बनाता,
चलता मन–बनजारा है।।
चाँद और मंगल का सपना।
सच होने जाता है अपना।
अमर तिरंगा ध्वज उछालकर
नवयुग ने ललकारा है।।
भारत–भू ने जन्म दिया है
यह सौभाग्य हमारा है।।

❖❖❖

नेताजी सुभाषचन्द्र बोस

गोपालप्रसाद व्यास

है समय नदी की बाढ़ कि जिसमें सब बह जाया करते हैं।
है समय बड़ा तूफान प्रबल पर्वत झुक जाया करते हैं ।।
अक्सर दुनियाँ के लोग समय में चक्कर खाया करते हैं।
लेकिन कुछ ऐसे होते हैं, इतिहास बनाया करते हैं ।।

यह उसी वीर इतिहास–पुरुष की अनुपम अमर कहानी है।
जो रक्त कणों से लिखी गई,जिसकी जयहिन्द निशानी है।।
प्यारा सुभाष, नेता सुभाष, भारत भू का उजियारा था ।
पैदा होते ही गणिकों ने जिसका भविष्य लिख डाला था।।

यह वीर चक्रवर्ती होगा, या त्यागी होगा सन्यासी।
जिसके गौरव को याद रखेंगे, युग–युग तक भारतवासी।।
सो वही वीर नौकरशाही ने, पकड़ जेल में डाला था ।
पर क्रुद्ध केहरी कभी नहीं फंदे में टिकने वाला था।।

बाँधे जाते इंसान,कभी तूफान न बाँधे जाते हैं।
काया जरूर बाँधी जाती,बाँधे न इरादे जाते हैं।।
वह दृढ़–प्रतिज्ञ सेनानी था,जो मौका पाकर निकल गया।
वह पारा था अंग्रेजों की मुट्ठी में आकर फिसल गया।।

जिस तरह धूर्त दुर्योधन से,बचकर यदुनन्दन आए थे।
जिस तरह शिवाजी ने मुगलों के,पहरेदार छकाए थे ।।
बस उसी तरह यह तोड़ पींजरा , तोते–सा बेदाग गया।
जनवरी माह सन् इकतालिस,मच गया शोर वह भाग गया।।

वे कहाँ गए, वे कहाँ रहे,ये धूमिल अभी कहानी है।
हमने तो उसकी नयी कथा, आजाद फौज से जानी है।।

❖❖❖

हमारा प्यारा हिन्दुस्तान

गयाप्रसाद शुक्ल 'सनेही'

जिसको लिए गोद में सागर,
हिम–किरीट शोभित है सर पर।
जहाँ आत्म–चिन्तन था घर–घर,
पूरब–पश्चिम दक्षिण–उत्तर।।
जहाँ से फैली ज्योति महान।
हमारा प्यारा हिन्दुस्तान ।।

जिसके गौरव–गान पुराने,
जिसके वेद–पुरान पुराने।
सुभट वीर–बलवान पुराने,
भीम और हनुमान पुराने।।
जानता जिनको एक जहान।
हमारा प्यारा हिन्दुस्तान।।

जिसमें लगा है धर्म का मेला,
ज्ञात बुद्ध जो रहा अकेला।
खेल अलौकिक एक सा खेला,
सारा विश्व हो गया चेला।।
मिला गुरु गौरव सम्मान।
हमारा प्यारा हिन्दुस्तान।।

गर्वित है वह बलिदानों पर,
खेलेगा अपने प्रानों पर।
हिन्दी तेगे है सानों पर,
हाथ धरेगा अरि कानों पर।।
देखकर बाँके वीर जवान।
हमारा प्यारा हिन्दुस्तान।।

❖❖❖

पराधीनता

बाल कवि बैरागी

पराधीनता को जहाँ समझा श्राप महान
कण–कण के खातिर जहाँ हुए कोटि बलिदान
मरना पर झुकना नहीं, मिला जिसे वरदान
सुनो–सुनो उस देश की शूर–वीर संतान
आन–मान अभिमान की धरती पैदा करती दीवाने
मेरे देश के लाल हठीले शीश झुकाना क्या जाने।

दूध–दही की नदियां जिसके आँचल में कलकल करतीं
हीरा, पन्ना, माणिक से है पटी जहां की शुभ धरती
हल की नोंकें जिस धरती की मोती से मांगें भरतीं
उच्च हिमालय के शिखरों पर जिसकी ऊँची ध्वजा फहरती
रखवाले ऐसी धरती के हाथ बढ़ाना क्या जाने
मेरे देश के लाल हठीले शीश झुकाना क्या जाने।

आजादी अधिकार सभी का जहाँ बोलते सेनानी
विश्व शांति के गीत सुनाती जहाँ चुनरिया ये धानी
मेघ साँवले बरसाते हैं जहाँ अहिंसा का पानी
अपनी मांगें पोंछ डालती हंसते–हंसते कल्याणी
ऐसी भारत माँ के बेटे मान गँवाना क्या जाने
मेरे देश के लाल हठीले शीश झुकाना क्या जाने।

जहाँ पढाया जाता केवल माँ की ख़ातिर मर जाना
जहाँ सिखाया जाता केवल करके अपना वचन निभाना
जियो शान से मरो शान से जहाँ का है कौमी गाना
बच्चा–बच्चा पहने रहता जहाँ शहीदों का बाना
उस धरती के अमर सिपाही पीठ दिखाना क्या जाने
मेरे देश के लाल हठीले शीश झुकाना क्या जाने।

❖❖❖

ऐ मेरे वतन के लोगों

रामचन्द्र द्विवेदी 'प्रदीप'

ऐ मेरे वतन के लोगों
तुम खूब लगा लो नारा
ये शुभ दिन है हम सब का
लहरा लो तिरंगा प्यारा
पर मत भूलो सीमा पर
वीरों ने हैं प्राण गँवाए
कुछ याद उन्हें भी कर लो
जो लौट के घर न आये ।

ऐ मेरे वतन के लोगों
जरा आँख में भर लो पानी
जो शहीद हुए हैं उनकी
जरा याद करो कुरबानी।

जब घायल हुआ हिमालय
खतरे में पड़ी आजादी
जब तक थी साँस लड़े वो
फिर अपनी लाश बिछा दी
संगीन पे धर कर माथा
सो गये अमर बलिदानी
जो शहीद हुए हैं उनकी
जरा याद करो क़ुरबानी।

जब देश में थी दीवाली
वो खेल रहे थे होली
जब हम बैठे थे घरों में
वो झेल रहे थे गोली
थे धन्य जवान वो अपने
थी धन्य वो उनकी जवानी
जो शहीद हुए हैं उनकी
जरा याद करो क़ुरबानी।

कोई सिख कोई जाट मराठा
कोई गुरखा कोई मदरासी
सरहद पर मरनेवाला
हर वीर था भारतवासी
जो खून गिरा पर्वत पर
वो खून था हिंदुस्तानी
जो शहीद हुए हैं उनकी
जरा याद करो क़ुरबानी।

थी खून से लथ–पथ काया
फिर भी बन्दूक उठाके
दस–दस को एक ने मारा
फिर गिर गये होश गँवा के
जब अन्त–समय आया तो
कह गये कि अब मरते हैं
खुश रहना देश के प्यारों
अब हम तो सफर करते हैं
क्या लोग थे वो दीवाने
क्या लोग थे वो अभिमानी
जो शहीद हुए हैं उनकी
जरा याद करो क़ुरबानी।

तुम भूल न जाओ उनको
इसलिये कही ये कहानी
जो शहीद हुए हैं उनकी
जरा याद करो क़ुरबानी।

❖❖❖

नहीं जी रहे अगर देश के लिए

उदयप्रताप सिंह

चाहे जो हो धर्म तुम्हारा चाहे जो वादी हो।
नहीं जी रहे अगर देश के लिए तो अपराधी हो।
जिसके अन्न और पानी का इस काया पर ऋण है
जिस समीर का अतिथि बना यह आवारा जीवन है
जिसकी माटी में खेले, तन दर्पण–सा झलका है
उसी देश के लिए तुम्हारा रक्त नहीं छलका है
तवारीख के न्यायालय में तो तुम प्रतिवादी हो।
नहीं जी रहे अगर देश के लिए तो अपराधी हो।
जिसके पर्वत खेत घाटियों में अक्षय क्षमता है
जिसकी नदियों की भी हम पर माँ जैसी ममता है
जिसकी गोद भरी रहती है, माटी सदा सुहागिन
ऐसी स्वर्ग सरीखी धरती पीड़ित या हतभागिन ?
तो चाहे तुम रेशम धारो या पहने खादी हो।
नहीं जी रहे अगर देश के लिए तो अपराधी हो।
जिसके लहराते खेतों की मनहर हरियाली से
रंग–बिरंगे फूल सुसज्जित डाली–डाली से
इस भौतिक दुनिया का भार हृदय से उतरा है
उसी धरा को अगर किसी मनहूस नजर से खतरा है
तो दौलत ने चाहे तुमको हर सुविधा लादी हो।
नहीं जी रहे अगर देश के लिए तो अपराधी हो।
अगर देश मर गया तो बोलो जीवित कौन रहेगा?
और रहा भी अगर तो उसको जीवित कौन कहेगा?
माँग रही है कर्ज जवानी सौ–सौ सर कट जाएँ
पर दुश्मन के हाथ न माँ के आँचल तक आ पाएँ
जीवन का है अर्थ तभी तक जब तक आजादी हो।
नहीं जी रहे अगर देश के लिए तो अपराधी हो।
चाहे हो दक्षिण के प्रहरी या हिमगिरी वासी हो
चाहे राजा रंगमहल के हो या सन्यासी हो
चाहे शीश तुम्हारा झुकता हो मस्जिद के आगे
चाहे मंदिर गुरूद्वारे में भक्ति तुम्हारी जागे
भले विचारों में कितना ही अंतर बुनियादी हो।
नहीं जी रहे अगर देश के लिए तो अपराधी हो।

❖❖❖

बढ़े चलो

पद्मकांत मालवीय

चले चलो, बढ़े चलो, बढ़े चलो, चले चलो।
प्रचंड सूर्य–ताप से, न तुम जलो, न तुम गलो!

हृदय से तुम निकाल दो अगर हो पस्त हिम्मती,
नहीं है खेल मात्र ये, ये जिन्दगी है जिन्दगी।
न रक्त है, न स्वेद है, न हर्ष है, न खेद है,
ये जिन्दगी अभेद है, यही तो एक भेद है।

समझ के सब चले चलो, कदम–कदम बढ़े चलो!

पहाड़ से चली नदी, रुकी नहीं कहीं जरा,
गई जिधर, उधर किया जमीन को हरा–भरा।
चली समान रूप से, जमीन का न ख्याल कर,
मगन रही निनाद में, जमीन पर पहाड़ पर।

उसी तरह चले चलो, उसी तरह बढ़े चलो!

जलाओ दिल के दाग से बुझे दिलों के दीप को,
जो दूर हैं उन्हें भी खींच लो जरा समीप को।
सहो जमीन की तरह, डरो न आसमान–से,
चलो तो आन–बान से, बुझो तो एक शान से।

अखंड दीप–से जलो, सदाबहार–से खिलो।

बिना पिए रहे नशा, न चढ़के वो उतर सके,
जुनून वह सवार हो कि जा न उम्र भर सके।
वो काम तुम करो यहां, जो दूसरा न कर सके,
कोई तुम्हारी शान से, न जी सके, न मर सके।

समीर–से चले चलो, समीर–से बहे चलो।

❖❖❖

भारत की आरती

शमशेर बहादुर सिंह

देश–देश की स्वतंत्रता देवी
आज अमित प्रेम से उतारती।

निकटपूर्व, पूर्व, पूर्व–दक्षिण में
जन–गण–मन इस अपूर्व शुभ क्षण में
गाते हों घर में हों या रण में
भारत की लोकतंत्र भारती।

गर्व आज करता है एशिया
अरब, चीन, मिस्र, हिंद–एशिया
उत्तर की लोक संघ शक्तियां
युग–युग की आशाएं वारतीं।

साम्राज्य पूंजी का क्षत होवे
ऊंच–नीच का विधान नत होवे
साधिकार जनता उन्नत होवे
जो समाजवाद जय पुकारती।

जन का विश्वास ही हिमालय है
भारत का जन–मन ही गंगा है
हिन्द महासागर लोकाशय है
यही शक्ति सत्य को उभारती।

यह किसान कमकर की भूमि है
पावन बलिदानों की भूमि है
भव के अरमानों की भूमि है
मानव इतिहास को संवारती।

❖❖❖

प्यारा हिंदुस्तान है

गणेशदत्त सारस्वत

अमरपुरी से भी बढ़कर के जिसका गौरव–गान है–
तीन लोक से न्यारा अपना प्यारा हिंदुस्तान है।
गंगा, यमुना सरस्वती से सिंचित जो गत–क्लेश है।
सजला, सफला, शस्य–श्यामला जिसकी धरा विशेष है।
ज्ञान–रश्मि जिसने बिखेर कर किया विश्व–कल्याण है–
सतत–सत्य–रत, धर्म–प्राण वह अपना भारत देश है।

यहीं मिला आकार 'ज्ञेय' को मिली नई सौगात है–
इसके 'दर्शन' का प्रकाश ही युग के लिए विहान है।

वेदों के मंत्रों से गुंजित स्वर जिसका निर्भ्रांत है।
प्रज्ञा की गरिमा से दीपित जग–जीवन अक्लांत है।
अंधकार में डूबी संसृति को दी जिसने दृष्टि है–
तपोभूमि वह जहाँ कर्म की सरिता बहती शांत है।
इसकी संस्कृति शुभ्र, न आक्षेपों से धूमिल कभी हुई–
अति उदात्त आदर्शों की निधियों से यह धनवान है।।

योग–भोग के बीच बना संतुलन जहाँ निष्काम है।
जिस धरती की आध्यात्मिकता, का शुचि रूप ललाम है।
निस्पृह स्वर गीता–गायक के गूँज रहें अब भी जहाँ–
कोटि–कोटि उस जन्मभूमि को श्रद्धावनत प्रणाम है।
यहाँ नीति–निर्देशक तत्वों की सत्ता महनीय है–
ऋषि–मुनियों का देश अमर यह भारतवर्ष महान है।

क्षमा, दया, धृति के पोषण का इसी भूमि को श्रेय है।
सात्विकता की मूर्ति मनोरम इसकी गाथा गेय है।
बल–विक्रम का सिंधु कि जिसके चरणों पर है लोटता–
स्वर्गादपि गरीयसी जननी अपराजिता अजेय है।
समता, ममता और एकता का पावन उद्‌गम यह है
देवोपम जन–जन है इसका हर पत्थर भगवान है।

❖❖❖

वह आग न जलने देना

रमानाथ अवस्थी

जो आग जला दे भारत की ऊँचाई,
वह आग न जलने देना मेरे भाई ।

तू पूरब का हो या पश्चिम का वासी
तेरे दिल में हो काबा या हो काशी
तू संसारी हो चाहे हो संन्यासी
तू चाहे कुछ भी हो पर भूल नहीं
तू सब कुछ पीछे पहले भारतवासी ।

उन सबकी नजरें आज हमीं पर ठहरीं
जिनके बलिदानों से आजादी आई ।

जो आग जला दे भारत की ऊँचाई,
वह आग न जलने देना मेरे भाई ।

तू महलों में हो या हो मैदानों में
तू आसमान में हो या तहखानों में
पर तेरा भी हिस्सा है बलिदानों में
यदि तुझमें धड़कन नहीं देश के दुख की
तो तेरी गिनती होगी हैवानों में ।

मत भूल कि तेरे ज्ञान सूर्य ने ही तो
दुनिया के अँधियारे को राह दिखाई ।

जो आग जला दे भारत की ऊँचाई,
वह आग न जलने देना मेरे भाई ।

तेरे पुरखों की जादू भरी कहानी
गौतम से लेकर गाँधी तक की वाणी
गंगा जमुना का निर्मल–निर्मल पानी
इन सब पर कोई आँच न आने पाए
सुन ले खेतों के राजा, घर की रानी ।

भारत का भाल दिनों–दिन जग में चमके
अर्पित है मेरी श्रद्धा और सचाई ।

जो आग जला दे भारत की ऊँचाई,
वह आग न जलने देना मेरे भाई ।

आजादी डरी–डरी है आँखें खोलो
आत्मा के बल को फिर से आज टटोलो
दुश्मन को मारो, उससे मत कुछ बोलो
स्वाधीन देश के जीवन में अब फिर से
अपराजित शोणित की रंगत को घोलो ।

युग–युग के साथी और देश के प्रहरी
नगराज हिमालय ने आवाज लगाई ।

जो आग जला दे भारत की ऊँचाई,
वह आग न जलने देना मेरे भाई ।

❖❖❖

देश की धरती

रामावतार त्यागी

मन समर्पित, तन समर्पित
और यह जीवन समर्पित
चाहता हूँ देश की धरती तुझे कुछ और भी दूँ !

माँ, तुम्हारा ऋण बहुत है, मैं अंकिचन
किंतु इतना कर रहा फिर भी निवेदन
थाल में लाऊँ सजाकर भाल जब भी
कर दया स्वीकार लेना वह समर्पण
गान अर्पित, प्राण अर्पित
रक्त का कण–कण समर्पित
चाहता हूँ देश की धरती तुझे कुछ और भी दूँ !

कर रहा आराधना मैं आज तेरी
एक विनती तो करो स्वीकार मेरी
भाल पर मल दो चरण की धूल थोड़ी
शीश पर आशीष की छाया घनेरी
स्वप्न अर्पित, प्रश्न अर्पित
आयु का क्षण–क्षण समर्पित
चाहता हूँ देश की धरती तुझे कुछ और भी दूँ !

तोड़ता हूँ मोह का बंधन क्षमा दो
गाँव मेरे, द्वार, घर, आँगन क्षमा दो
देश का जयगान अधरों पर सजा है
देश का ध्वज हाथ में केवल थमा दो
ये सुमन लो, यह चमन लो
नीड़ का तृण–तृण समर्पित
चाहता हूँ देश की धरती तुझे कुछ और भी दूँ !

❖❖❖

सृजन स्मरण

रामधारी सिंह 'दिनकर'

जन्म-23 सितम्बर 1908 , निधन-24 अप्रैल 1974

जय हो जग में जले जहाँ भी, नमन पुनीत अनल को,
जिस नर में भी बसे, हमारा नमन तेज को, बल को।
किसी वृन्त पर खिले विपिन में, पर, नमस्य है फूल,
सुधी खोजते नहीं, गुणों का आदि, शक्ति का मूल।

ऊँच–नीच का भेद न माने, वही श्रेष्ठ ज्ञानी है,
दया–धर्म जिसमें हो, सबसे वही पूज्य प्राणी है।
क्षत्रिय वही, भरी हो जिसमें निर्भयता की आग,
सबसे श्रेष्ठ वही ब्राह्मण है, हो जिसमें तप–त्याग।

गोपाल सिंह नेपाली

जन्म-11 अगस्त 1911, निधन-17 अप्रैल 1963

राजा बैठे सिंहासन पर,
यह ताजों पर आसीन कलम
मेरा धन है स्वाधीन क़लम
जिसने तलवार शिवा को दी
रोशनी उधार दिवा को दी
पतवार थमा दी लहरों को
खंजर की धार हवा को दी।
अग–जग के उसी विधाता ने,
कर दी मेरे आधीन क़लम
मेरा धन है स्वाधीन क़लम।